Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

कुषाण कालीन मथुरा कला में ब्राह्मण देवियाँ

डॉ आयशा फ़ातमी*

संक्षिप्तिका

'देवी' के रूप में स्त्री की पूजा की परम्परा भारत सहित विश्व के लगभग सभी देशों में आदिकाल से रही है। भारतीय सभ्यता के आरंम्भ से ऐतिहासिक काल के विभिन्न युगों में देवी मूर्तियों का निर्माण मूर्तिकला तथा प्रतिमा विज्ञान दोनों ही दृष्टियों से विशिष्ट स्थान रखता है।

कुषाणकाल भारतीय इतिहास एवं संस्कृति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण काल है। आर्थिक समृद्धि के कारण सांस्कृतिक विकास के नवीन द्वार खुले तथा कला को विकसित होने का भरपूर अवसर मिला। तत्कालीन कला के दो प्रमुख केन्द्रों मथुरा एवं गांधार में विभिन्न धर्मों से संबंधित मूर्तियों का निर्माण हुआ और लौकिक जीवन के विविध पक्षों का भी हृदय से रूपांकन किया गया। कुषाण शासक धर्म सहिष्णु थे अतः सभी धर्मों को विकसित होने का सुअवसर मिला। बौद्ध धर्म की महायान शाखा से संबंधित मूर्तियों के अतिरिक्त बाह्मण धर्म की मूर्तियों का भी भरपूर अंकन किया गया जिसमें विभिन्न देवियों की मूर्तियों का निर्माण उनकी संवेदनशीलता और रचनात्मकता का परिचय देता है। प्रस्तुत शोधपत्र में कुषाण काल के प्रसिद्ध कला केन्द्र मथुरा में निर्मित बाह्मण देवियों की मूर्तियों को एकत्रित करने का प्रयास किया गया है।

मूख्य बिन्दु – कुषाण कला, मथुरा, देवी, ब्राह्मण देवियाँ

कुषाणों का काल प्राचीन भारत का एक महत्वपूर्ण काल था। इस समय उत्तरी भारत ने आर्थिक समृद्धि और धन–धान्यपूर्णता का समय देखा। यद्यपि कुषाण विदेशी थे परन्तु कालान्तर में उन्होंने भारतीय वातावरण तथा संस्कृति के साथ समायोजन किया और उनका पूर्ण भारतीयकरण हो गया।

कला के क्षेत्र में कुषाणों का महत्वपूर्ण योगदान है। इस समय मथुरा तथा गांधार कला के दो प्रमुख केन्द्र थे जहाँ बौद्ध मूर्तियों के अतिरिक्त विविध विषयों पर कलाकार ने कलात्मक क्षमता का परिचय दिया है। कुषाणकालीन कलाकृतियाँ मुख्यतः मथुरा, साँची, सारनाथ, श्रावस्ती, अहिच्छत्र, संघोल महास्थान कौशाम्बी, कसिया, तक्षशिला, आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं किन्तु इन सब में मथुरा का स्थान अग्रणी है। धर्म की दृष्टि से मथुरा साम्प्रदायिक सहिष्णुता का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है क्योंकि यहाँ जैन, बौद्ध तथा ब्राह्मण तीनों धर्मों से संबंधित कलात्मक साक्ष्य मिलते हैं। इन कलाकृतियों में नारी को एक महत्वपूर्ण प्रतिमान के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

कुषाणकालीन मथुरा[1] कला में नारी को न केवल पूर्ण यौवन, अप्रतिम सौन्दर्य और विविध भाव–भंगिमाओं में अंकित किया गया अपितु उसके 'देवी' रूप के प्रकटीकरण हेतु विभिन्न रूपों में उसे कला में स्थान मिला। देवियों में लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, महिषमर्दिनी दुर्गा, पार्वती तथा सप्तमातृकाओं का विशिष्टतः अंकन मिलता है। इसके अतिरिक्त शिवपार्वती की संयुक्त मूर्तियाँ भी मिलती हैं–

देवी लक्ष्मी – हिन्दू देव परिवार में सौभाग्य, समृद्धि और ऐश्वर्य की देवी लक्ष्मी का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लक्ष्मी के 'गजलक्ष्मी' रूप की मूर्तियाँ शुंगकाल से ही मिलने लगती हैं। कुषाण काल में इस देवी की बड़ी और चतुर्दिक दर्शन वाली मूर्तियाँ बनने लगीं। भारतीय धर्म तथा कला के क्षेत्र में लक्ष्मी को समृद्धि का प्रतीक माना गया है, कुषाणकालीन मथुरा कला में इन्हें कतिपय परिवर्तनों के साथ स्थान दिया गया है। दैवीय सौन्दर्य एवं गौरव दोनों से परिपूर्ण निस्सरित कमल पर खड़ी लक्ष्मी को जिस भाँति मथुरा शैली में निरूपित किया गया है, वह समृद्धि के साथ सृजनशीलता की भी आत्मचेतनात्मक प्रस्तुति है। एक मूर्ति में देवी श्रीलक्ष्मी कमल फूलों से भरे पूर्ण घट पर खड़ी है और अपने बायें हाथ से

*एसोशिएट प्रोफेसर– प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व, नारी शिक्षा निकेतन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ।

दुग्धाधारिणी मुद्रा में दूध की धार छोड़ती हुई दिखायी गयी है।[2] वे कुण्डलों, हारों, केयुरों, वलयों, मेंखला, आदि आभूषणों से अलंकृत है। यह प्रतिमा मथुरा के कुषाण कालीन शिल्पियों की अनुपम कृति है जिसमें दुग्धाधारिणी स्वरूप लक्ष्मी के मातृत्व का द्योतक है। कमल की उठती हुई बेल पर मोर मोरनी का जोड़ा है। कुषाण कालीन कई मूर्तियों में 'हारीति' (सौभाग्य और धनधान्य की देवी) और लक्ष्मी को कुबेर (धन के देवता) की पत्नी के रूप में साथ–साथ दिखाया गया है।[3] कालान्तर में लक्ष्मी गणेश की पत्नी के रूप में भी अंकित की गयी है। गुप्तकाल में विष्णु और लक्ष्मी की प्रतिमाओं का संबंध सुनिश्चित हुआ। मथुरा संग्रहालय के एक शिलापट्ट[4] पर गजलक्ष्मी को ब्राह्मण धर्म के तीन प्रमुख देवताओं अर्धनारीश्वर, विष्णु एवं कार्तिकेय[5] के साथ दर्शाया गया है। सभी मूर्तियाँ स्थानक मुद्रा में हैं। देवी का दायां हाथ अभय मुद्रा में और बायें हाथ में सनाल कमल का अंकन है। यहाँ लक्ष्मी उचित ही अपने पति विष्णु के पार्श्व में अंकित की गयी हैं। कुषाण राजाओं के स्वर्ण सिक्कों पर अंकित 'आरदोक्षो' (ऐश्वर्य, विजय आदि प्रदान करने वाली देवी) का तादाम्य लक्ष्मी से किया जाता है।[6] इन सिक्कों पर आरदोक्षो को प्रायः कार्नुकोपिया तथा पाश लिये हुए स्थानक अथवा आसन मुद्रा में दिखाया गया है। सोंख (मथुरा) से प्राप्त एक ताम्रमुद्रा[7] पर बैठी हुई देवी के पैरों के नीचे कमल का अंकन आरदोक्षो के भारतीयकरण का संकेत करता है। कुषाण काल के उत्तरार्द्ध की मुद्राओं पर आरदोक्षो के जिस स्वरूप का प्रदर्शन हुआ है, वही गुप्तकाल के प्रारम्भिक सिक्कों पर दर्शनीय है।

देवी सरस्वती – ज्ञान, विद्या और कला की देवी सरस्वती की गणना प्रमुख हिन्दू देवियों में होती है। इनका आदि रूप शुंगकालीन भरहुत की वेदिका स्तम्भ पर अंकित एक वाद्ययंत्र बजाती यक्षी मूर्ति[8] में माना जा सकता है। कुषाण कालीन मथुरा कला में सरस्वती मूर्ति के प्रमाण मिलते हैं। ब्राह्मण धर्म की देवी के रूप में सरस्वती को ख्याति प्राप्त हो जाने पर भी उक्त देवी के जो प्राचीनतम् रूप उपलब्ध हैं, पह संभवतः जैन धर्म से संबंधित है। कंकालीटीला (मथुरा) से प्राप्त सरस्वती मूर्ति[9] में द्विभुजी देवी के कंधे तक उठा दायॉ हाथ खण्डित है। संभवतः इनमें अक्षमाला थी जिसके कुछ मनके अब भी अवशिष्ट हैं। देवी के बायें हाथ में पुस्तक है। मस्तक खण्डित हो चुका है। पादपीठ पर अंकित लेख के अनुसार इस मूर्ति का काल शक् संवत 54 (54+78 = 132 ई०) निर्धारित किया गया है। समकालीन अन्य देवियों के विपरीत सरस्वती की प्रतिमा सादगी का प्रत्यक्ष रूप है। इस मूर्ति में सरस्वती का जो प्राचीन रूप अंकित है उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि ब्राह्मण धर्म की सरस्वती का भी कुषाण काल में यही रूप रहा होगा। इस पर अंकित लेख से ज्ञात होता है कि कुषाण काल से ही सरस्वती नर्तकों की भी अराध्य थीं।

देवी दुर्गा – हिन्दू देवियों में दुर्गा का विशिष्ट स्थान है। दुर्गा शिव से संबंधित होते हुए भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती हैं। शक्ति और क्रियाशीलता की प्रतीक देवी दुर्गा के प्राचीनतम चित्रण कुषाणकालीन मथुरा कला के हैं। दुर्गा की स्थानक मूर्तियाँ द्विभुजी, चतुर्भुजी और षडभुजी हैं जो मथुरा संग्रहालय में सुरक्षित हैं। द्विभुजी मूर्तियों में एक स्थानक मूर्ति[10] का उल्लेख आवश्यक है जिसमें देवी के साथ सिंह अंकित है। यह मूर्ति लगभग प्रथम शती ई० की है। मूर्ति का उर्ध्व भाग खण्डित है और बायां हाथ कटि पर है। चतुर्भुजी मूर्तियों में पूर्व सामान्य हाथों की मुद्रा के अतिरिक्त उर्ध्वकरों में शक्ति एवं त्रिशूल[11] अथवा त्रिशूल और खेटक[12] अथवा खड्ग एवं खेटक[13] अथवा खड्ग एवं त्रिशूल[14] का चित्रण है। षड्भुजी मूर्तियों[15] में शेष दो दाएं हाथों में क्रमशः शक्ति और खड्ग और बाएं हाथों में त्रिशूल और सर्प (संभवतः) है।

दुर्गा महिषासुरमर्दिनी[16] की मूर्ति कुषाण काल में विशेष लोकप्रिय थी। मथुरा से इस काल की अनेक पाषाण एवं मृण्मयी मूर्तियाँ मिली हैं। इनमें देवी चतुर्भुजी एवं षडभुजी हैं और महिषासुर का वध करती हुई चित्रित हैं।[17] इन मूर्तियों में खड़ी हुई देवी के सम्मुख दैत्य पूर्णतः महिष रूप में उछलता हुआ पिछले पैर पर खड़ा है, उसके अगले पैर मुड़े हुए हैं और उसका मस्तक देवी के कंधे तक पहुँच रहा है। देवी सामान्य हाथों में दाएं से महिष की पीठ और बाएं से ग्रीवा दबा रहीं हैं। इस प्रकार देवी अपने हाथों में धारण किये गये आयुधों से नहीं

वरन् दोनों करों से महिषासुर का संहार करती हुई चित्रित हैं।

देवी पार्वती – हिन्दू देव परिवार में शिव पत्नी पार्वती का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। कला में पार्वती की कोई शुंगकालीन प्रतिमा प्रकाश में नहीं आयी है। अभी तक पार्वती के प्राचीनतम् चित्रण कुषाणकाल से ही मिलते हैं। मथुरा संग्रहालय की एक द्विभुजी मूर्ति[18] में अग्नि ज्वालाओं के मध्य जटाजूट धारी देवी खड़ी मुद्रा में तप करती हुई प्रदर्शित है। बायाँ हाथ कटि पर है और दायां हाथ खण्डित है। शिव–पार्वती रूप में पार्वती शिव के वामांग में खड़ी हैं।[19] अर्द्धनारीश्वर रूप संभवतः कुषाणों के समय में मथुरा से ही मिलते हैं जिनमें दक्षिणार्ध भाग पुरुष का और वामार्ध भाग स्त्री का है। यह शिव का नरनारीमय शरीर है। इस प्रकार की मूर्तियों में एक ओर पुरुष व्यंजन और दूसरी ओर स्त्री व्यंजन दिखये जाते हैं। दाहिनी ओर जटाजूट और बाघाम्बर एवं बाई ओर अलकावली, कर्ण कुण्डल, एकस्तन, मेखला और साड़ी का चित्रण होता है।[20]

सप्तमातृकाएं – ब्राह्मण धर्म में मातृका पूजन का विशेष महत्व है। इस पूजा का सूत्रपात कब हुआ और तत्कालीन समाज में उसका स्वरूप क्या था इस विषय पर कुछ भी निश्चयतः नहीं कहा जा सकता ।सिन्धु सभ्यता के पुरातात्विक साक्ष्यों में मातृदेवी की पूजा के संकेत मिलते हैं।[21] कुषाण युग में सप्तमातृका पूजा के रूप में देवी के विविध अवतारों की भी मान्यता हुई। वस्तुतः सप्तमातृकाओं की कल्पना वैदिक थी[22] किन्तु कुषाण काल में इसकी व्याख्या की गयी और उस युग के सात देवताओं को लेकर सप्तमातृकाओं की कल्पना की गयी –

ब्रह्म	ब्रह्माणी
विष्णु	वैष्णवी
शिव	माहेश्वरी
इन्द्र	इन्द्राणी
कुमार	कौमारी
वराह	वराही
नृसिंह	नारसिंही
यम	चामुण्डा

आरम्भिक कुषाण काल में ये सातो देवियाँ सीधे सादे वेश में घाघरा पहने आयुध लांछन के बिना दिखायी गयी हैं। सप्तमातृकाओं का प्राचीनतम चित्रण मथुरा संग्रहालय के एक शिलापट्ट[23] पर दर्शनीय है, जिसमें द्विभुजी मातृकाएं खड़ी हैं। मातृकापट्टों पर प्रायः बैठी हुई देवियों के साथ शिशु अथवा बालक भी विभिन्न मुद्राओं में चित्रित है।[24] कुछ शिलापट्टों पर पक्षी अथवा पशुमुख से युक्त मातृकाओं का अंकन मिलता है।[25] किसी लांछन विशेष अथवा वाहनादि से युक्त न होने के कारण मातृकाओं में कोई भेद दृष्टिगोचर नहीं होता है।

अन्य देवियाँ – प्रमुख देवियों के अतिरिक्त कुछ अन्य देवियों के चित्रण भी कुषाणकालीन मथुरा कला में मिलते हैं जिनमें प्रमुख निम्न हैं––

वसुधारा – बसुधारा पृथ्वी का ही मानवीकृत रूप है जिन्हें महीं भू, भूधरा, धरती, वसुन्धरा, बसुधा आदि नामों की संज्ञा दी गयी है। भारतीय कला में स्त्री विग्रह में पृथ्वी चित्रण शुंगकाल से हुआ माना जाता है।[26] मत्स्य द्वय को हाथ में लिये अभयमुद्रा में खड़ी द्विभुजी देवी[27] की मिट्टी की प्रतिमाएं अधिक हैं। पाषाण मूर्तियाँ अपेक्षाकृत कम हैं। कुषाणकाल मे वसुधारा का रूप विकसित हुआ। कुछ मूर्तियों में इस देवी के साथ घट और छत्र भी दिखाई देते हैं।[28] मूर्ति को प्रथम दृष्टया देखने पर यह लक्ष्मी का ही रूप प्रतीत होती है। ऐश्वर्य के प्रतीक घट के निकट होने से ही कुछ विद्वानों ने इसे 'वसुधारा' नाम दिया होगा। प्रारम्भिक काल की इस तथाकथित वसुधारा को बौद्धों के महायान सम्प्रदाय की देवी वसुधारा से मिलाना युक्तियुक्त नही है।

गंगा–यमुना – हिन्दू धर्म की देवियों के मध्य गंगा और यमुना की मान्यता जल देवियों के रूप में है। गंगा और यमुना नदी देवियों के मानवीकृत रूप में चित्रण के अवशेष संभवतः ढ़लते कुषाण काल से मिलने लगते हैं। मथुरा संग्रहालय की एक पाषाणाकृति पर[29] गंगा–यमुना को क्रमशः मकर तथा कूर्म वाहनों पर आरूढ़ दिखाया गया है। देवियों का दायां हाथ अभय मुद्रा में तथा बायां सनाल पद्म के साथ कटि पर स्थित है।

गंगा–यमुना का अभिप्राय गुप्तकाल में विशेष लोकप्रिय हुआ।

एकानंशा – एकानंशा की मान्यता बलराम और कृष्ण की भगिनी के रूप में थी जो उनके साथ संयुक्त रूप से पूजी जाती थी। यदुओं की कुल देवी एकानंशा के प्रारम्भिक चित्रण मथुरा की कुषाण कालीन कला में दर्शनीय हैं। एकानंशा की मूर्तियों में[30] बीच में द्विभुजी देवी तथा उसकी दाहिनी ओर सिंहमुख हल और मूसलधारी बलराम एवं बाई ओर चतुर्भुज वासुदेव कृष्ण बने हैं। ध्यातत्व है कि एकानंशा की पूजा परम्परा नामभेद से आज भी प्रचलित है जबकि वसुधारा की पूजा गुप्तकाल तक पहुँचते–चहुँचते लुप्त हो गयी।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि कुषाण कालीन मथुरा कला में विभिन्न देवियों की पूजा परम्परा विद्यमान थी। इस काल में देवी की परिकल्पना में विशिष्ट विविधता देखने को मिलती है। शाक्त चिंतन के फलस्वरूप कुषाणकालीन कला में देवी के श्री, गजलक्ष्मी, यक्षी इत्यादि पूर्व–कल्पित रूपों के अतिरिक्त पार्वती, महिषासुरमर्दिनी, सिंहवाहिनी, दुर्गा, एकानंशा, वसुधारा तथा विभिन्न मातृकाओं की मूर्तियाँ निर्मित की गयीं। यद्यपि इस काल में देवियों के प्रतिमा लक्षण समस्त रूप से विकसित नहीं हो पाये थे और शिल्पियों ने उन्हें बहुत कुछ अपनी कल्पना के आधार पर मूर्त रूप प्रदान किया इसलिए प्रतिमाविज्ञान सीमित रहा और देवी मूर्तियों में लक्षणगत् विभिन्नताएं अधिक नहीं हैं। शनैः–शनैः इन लक्षणों का विकास हुआ और इन्हीं परम्परागत् प्रतिमा लक्षणों को गुप्तकालीन धार्मिक साहित्य में स्थिरता प्रदान की गयी और उनके आधार पर मूर्ति निर्माण परम्परा विकसित हुई।

संदर्भ –

1. बाजपेई, के0डी0, कुषाण आर्ट ऑफ मथुरा, मार्ग, वाल्यूम 15(2) मार्च 1962; जोशी, एन0पी0 मथुरा स्कल्पचर्स, मथुरा 1966
2. अग्रवाल, वासुदेव, भारतीय कला,(वाराणसी, 1966,) पृष्ठ 236, चित्र 362,
3. वही, पृष्ठ 272, चित्र 423,
4. मूर्ति संख्या, 34.2520.
5. यह देवता अग्रवाल महोदय के अनुसार कुबेर है (ब्राह्मनिकल इमेज इन मथुरा) जे0आई0एस0 ओ0ए0 1937 वाल्यूम 5 पृष्ठ 124; ऐन अर्ली ब्राह्मनिकल रिलीफ फ्रॉम मथुरा, जे0यू0पी0 एच0एस0, वाल्यूम 10, दिसम्बर 1937 प्लेट 2, पृष्ठ 32–33
6. रोजनफील्ड जे0एम0, द डायनेस्टिक आर्ट ऑफ कुषनाण (केलिफोर्नियां 1967) पृष्ट 74–75
7. जोशी. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान(पटना 1977) पृष्ठ 118.
8. इण्डियन म्यूज़ियम संख्या, 243
9. संख्या J 24.
10. संख्या 214/ए ए.एस.आई.आर. 1911–12 प्लेट LVI
11. संख्या 592 एवं 724; सिंह, एस0बी0, ब्राह्मनिकल आइकन इन नार्दर्न इण्डिया, नई दिल्ली 1977 पृष्ठ 154
12. सिंह, एस.बी., वही, पृष्ठ 154
13. संख्या 65.1; जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, पृष्ठ 135, रेखाचित्र 93.
14. संख्या 21.1709; जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, वही पृष्ठ 135.
15. संख्या 42.2947;जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, वही पृष्ठ 136.
16. जायसवाल, कुसुम कुमारी, उत्तर भारत की प्राचीन हिन्दू देवी मूर्तियाँ. (दिल्ली 1992) फलक 20, चित्र 50, फलक 21, चित्र 51.
17. वही, पृष्ठ 119–120.
18. सिंह, एस.बी., वहीं, पृष्ठ 150
19. अग्रवाल वासुदेवशरण, वही, पृष्ठ 269, चित्र 417.
20. वही, पृष्ठ 269,चित्र 418.
21. मार्शल, जे; मोहनजोदड़ो एण्ड द इण्डस सिविलाइजेशन वाल्यूम 1, लंदन 1931, पृष्ठ 61; मैके ई.जे.एच, अर्ली इण्डस सिविलाइजेशन लंदन, 1948, पृष्ठ 54
22. दीक्षित एस.के., मदर गॉडेज पूना 1943, पृष्ठ 122, धावलिकर एम.के., द ओरिजिन ऑफ सप्तमातृका, बी.डी.सी.आर.आई. वाल्यूम XXI 1960 पृष्ठ 21, 22
23. अग्रवाल आर.सी. ''मातृका रिलीफ्स इन अर्ली इण्डियन आर्ट, ''ईस्ट एण्ड वेस्ट निव सीरीज,

वाल्यूम' XXI नम्बर्स 1–2, 1971 पृष्ठ 79, चित्र।
24. वही, पृष्ठ 81.
25. वही, पृष्ठ 81.
26. काला, सतीष चन्द्र, भारतीय मृत्तिका कला, इलाहाबाद, 1972. पृष्ठ 24.
27. जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, वही, रेखाचित्र 83, चित्र संख्या 91.
28. वही, रेखाचित्र 82.
29. जायसवाल, कुसुम कुमारी, वही,चित्र संख्या 164(फलक 65)
30. जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम, वही, चित्र 65, रेखाचित्र 80, 81.

संकेत सूची

- ए.एस.आई.ए.आर. – आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया एनुअल रिपोर्ट्स (निव सीरीज) सर जॉन मार्शल द्वारा प्रारम्भ।
- बी.डी.सी.आर.आई. – बुलिटेन ऑफ डेकेन कालेज रिसर्च इंस्टीट्यूट पूना।
- जे.आई.एस.ओ.ए. – जर्नल ऑफ इण्डियन सोसाइटी ऑफ ओरियेण्टल आर्ट कलकत्ता।
- जे.यू.पी.एच.एस. – जर्नल ऑफ उत्तर प्रदेश हिस्टोरिकल सोसाइटी, लखनऊ।